कहीं कोई रेखा तो हो...

बदलते युग के साथ-साथ मनोरंजन के तौर-तरीकों और विधाओं में काफी बदलाव आया है, पिछले एक दशक में प्रौद्योगिकी ने मनोरंजन और मीडिया के पूरे परिदृश्य में न केवल जबरदस्त परिवर्तन ला दिया है बल्कि उसे उद्योग में बदल दिया है। मनोरंजन मनुष्य की मूल प्रवृति है। इस दृष्टि से मीडिया में मनोरंजन के बढ़ते दायरे को अस्वाभाविक नहीं माना जा सकता। यह भी निर्विवाद है कि सूचना, समाचार और विचार के सम्प्रेषण के साथ मीडिया की एक महत्वपूर्ण भूमिका मनोरंजन की भी है, पर मीडिया से यह सहज अपेक्षा की जाती है कि यह भारतीय संस्कृति और सभ्यता के अनुरूप मनोरंजन की ऐसी सामग्री प्रस्तुत करे, जिससे हमारे मूल्यों और मान्यताओं को कोई आघात न पहुँचे, अपितु वे अधिक पुष्ट हों। पर आज मीडिया के असीमित विस्तार और विदेशी पूंजी और संस्कृति के बढ़ते हस्तक्षेप ने न केवल मनोरंजन अपितु मीडिया से की जाने वाली सारी अपेक्षाओं को छिन्न-भिन्न कर दिया है। मनोरंजन के नाम पर जो कुछ भी परोसा जा रहा है उसका देश के आम जनजीवन से कोई सरोकार नहीं है। टेलीविजन के कार्यक्रम या तो विदेशी कार्यक्रमों की भौंडी नकल हैं या भद्रलोक की बाजार प्रभावित जीवन शैली की प्रस्तुति हैं, इसी के चलते मीडिया द्वारा किए जा रहे जन रंजन के तौर तरीकों पर सवालिया निशान लग रहा है। क्या हम मनोरंजन के नाम पर फूहड़ होने के साथ-साथ आस्थाओं और स्वस्थ परंपराओं को धूमिल करने वाली प्रस्तुतियों को अनदेखा कर सकते हैं जो हमें अपनी जड़ों से काटती है।

मीडिया की अंतर्वस्तु में मनोरंजन की मात्रा बढ़ती जा रही है, विशुद्ध मनोरंजन से जुड़े मीडिया में तो एक सीमा तक इसे होना ही है, पर खबर से जुड़े माध्यमों में इसकी बढ़ती पैठ और मात्रा जरूर चिंतनीय है, क्योंकि यह प्रवृत्ति समाज को जरूरी सूचनाओं और गंभीर विमर्श से दूर करने वाली है। मनोरंजन मीडिया में यदि मात्रा के पहलू को अनदेखा कर भी दिया जाए तो भी उसका जो स्वरूप है वह विचारणीय है।

आज देश में खबरों और मनोरंजन बाजार के आंकड़ों को मानो पंख लग गए हैं। इसकी रफ्तार चकित करने वाली है। मीडिया और मनोरंजन उद्योग की वृद्धि दर अर्थव्यवस्था की विकास दर से अधिक है। बड़े कारपोरेट समूहों के साथ-साथ दुनिया भर की बहुराष्ट्रीय कंपनियां तेजी से बढ़ते-फैलते भारतीय मीडिया उद्योग में अपनी हिस्सेदारी और जगह बनाने के लिए प्रयासरत है। हर जगह मनोरंजन की बयार है। मनोरंजन के परम्परागत माध्यम या तो अप्रासंगिक हो रहे हैं या अपने स्वरूप में आमूल-चूल परिवर्तन लाने को बाध्य हैं। टेलीविजन मनोरंजन की नई भाषा और परिभाषा गढ़ रहा है, 'रियलिटी' और 'कॉमेडी' हर चैनल पर उफन रही है। रियलिटी का असत्य व कॉमेडी का भौंडापन नकली माल की तरह बिक रहा है। यहाँ तक की खबरों में मनोरंजन है या मनोरंजन ही खबर है कह पाना कठिन है। सबसे त्रासद स्थिति यह है कि उसे त्रासदी को मनोरंजन बना कर पेश करने से भी गुरेज नहीं है। छपे माध्यम यानी अखबार विचार प्रधान और जनसरोकारों के प्रति प्रतिबद्ध माध्यम माना जाता रहा है। वह भी दृश्य माध्यम की तरह दर्शनीय बनने की होड़ में जुट गया है। इंटरनेट जैसा आधुनिक माध्यम भी, इस प्रवृत्ति का अनुगामी है।

मीडिया के मनोरंजक होने के लिए समुद्रपारीय पूँजी और अन्तरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ-साथ भारत में साक्षर और युवाओं की बढ़ती संख्या को जिम्मेदार माना जा रहा है। इक्कीसवीं सदी में भारतीय समाज की साँस्कृतिक संरचना में परिवर्तन हुए हैं, तकनीकी विकास ने उसमें उत्प्रेरक का काम किया है। समाज की चिंतन शैली और दृष्टि में बदलाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होने लगा है। युवा भारत अब मनोरंजन के नए रंग-ढंग की तलाश करने को लालायित है। मीडिया इस तलाश में उसकी सहायता में ही आगे नहीं आया बल्कि वह उसमें इजाफा करने का कोई मौका भी नहीं छोड़ना चाहता है। पर भारतीय समाज जो वास्तव में कई विविधताओं को समेट कर चलने वाला प्राचीन समाज है, वह नए बदलाव को पूरी तरह स्वीकारने और अपनी परम्पराओं, मर्यादाओं, मूल्यों, मानकों, आदर्शों और जीवन शैलियों से आबद्ध रहने की दुविधा में है, जो कि प्रश्न को ज्यादा जटिल बना देती है और मीडिया आलोचना के घेरे में आ जाता है।

मीडिया मीमांसा का यह अंक मीडिया और मनोरंजन पर एकाग्र है, जिसमें हमारी कोशिश मीडिया की उपलब्धियों को नकारना या उसकी आलोचना करना नहीं है, लेकिन मीडिया और मनोरंजन उद्योग के बदलते स्वरूप, उनके अंतर्सम्बंध पर उसकी अंतर्विरोधी प्रवृत्तियों उससे जुड़े अर्थतंत्र और सरोकारों की मीमांसा करना जरूर है।

आज मीडिया क्या केवल आर्थिक मजबूरियों के चलते केवल बाजार के दबाव में मनोरंजन की विकृतियों की ओर प्रवृत्त हो रहा है? या इसके लिए साँस्कृतिक, सामाजिक बदलाव की बयार भी जिम्मेदार है। क्या व्यवसाय और अपनी नैतिक जिम्मेदारी के बीच मीडिया मनोरंजन के संदर्भ में कोई सीमा रेखा खींच सकता है? ऐसे ही कुछ सवालों का मीडिया और मीडिया शिक्षा से जुड़े जाने वाले विद्वानों ने अपने शोधपरक आलेखों के माध्यम से खुलासा किया है। प्रो. के.वी. नागराज, प्रो. विजय लक्ष्मी एवं डॉ. त्रिपुरा सुन्दरी, प्रो. रविधर एवं सुश्री ऊषारानी ने प्रिंट मीडिया के बदलाव, टेलीविजन के बच्चों पर प्रभाव व रियलिटी शो के पहलुओं को विश्लेषित किया है। सुश्री वर्तिका नंदा ने प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के मनोरंजक होने के कारणों का विश्लेषण करते हुए अनेक नए तथ्यों को सामने रखा है, तो श्री बालेन्दु दाधीच ने इंटरनेट किस तरह मनोरंजन की दुनिया को बदल रहा है इसकी जानकारी दी है।

इस अंक में मुख्यधारा के मीडिया के अलावा बदलते दौर में मनोरंजन के परम्परागत माध्यमों में आ रहे बदलाव को भी रेखांकित करने का प्रयास किया है।

मीडिया मीमांसा ने मीडिया के हर पहलू और समसामयिक पत्रकारीय विषयों पर समीक्षात्मक, विश्लेषणात्मक और शोधपरक सामग्री के प्रकाशन से कम ही समय में देश के वरिष्ठ पत्रकारों, संपादकों, लेखकों, स्तंभकारों, पत्रकारिता एवं संचार के प्राध्यापकों, विद्यार्थियों और मीडिया विषय के पाठकों के बीच अपनी पहचान बनाने में सफल रही है। मेरा प्रयास होगा कि पूर्ववर्ती संपादक द्वारा स्थापित मानदंड और गुणवत्ता की सामग्री देने की परंपरा का निर्वाह हो, इस कार्य हेतु मुझे आपका सतत् सहयोग प्राप्त होता रहेगा, ऐसा विश्वास है।

इस महत्वपूर्ण विषय पर अपनी सीमाओं में संकलित सामग्री का संयोजन आपको कैसा लगा, आपकी प्रतिक्रिया से हमारा मार्गदर्शन होगा, हमें उसकी प्रतीक्षा रहेगी।

शुभकामनाओं सहित,

प्रो. बृजकिशोर कुठियाला